

लोक अदालत का मूलाधार*

बहुत पुष्प मालाएं पहिनाई गईं। राघोगढ़ तो गेंदे के फूलों के लिए मशहूर है। जब मालाएं पहिनाई जा रही थीं तो मैं बड़े मनोयोग से देख रहा था कि भाई मूलसिंहजी, मेरे पुराने मित्र हैं, लगभग 12 वर्षों के बाद आज हम लोग मिले हैं, वे बड़े संकोच से मालाएं स्वीकार कर रहे थे। स्वीकार तो कर रहे थे, गले में नहीं पहिन रहे थे। एक समय था मुझे भी कोई माला पहिनाता था तो बड़ा संकोच होता था। एक दिन मैंने विश्लेषण किया कि माला क्यों पहिनाई जाती है, पहिनने में संकोच क्यों होता है? मुझे लगा है कि परमेश्वर की सृष्टि में फूल ही एक ऐसी वस्तु है जिसमें रूप भी है, रस भी है, गंध भी है। रूप नेत्रों को तृप्ति देता है, रस आत्मा को तृप्ति देता है और गंध मानस को उत्प्रेरित करती है। जब स्नेह और अपनत्व का बाहुल्य होता है। तो आत्मीयता में रूप भी होता है, रस भी और गंध भी। किन्तु उसे व्यक्त नहीं किया जा सकता। इसलिए व्यक्ति पुष्पों का सहारा लेता है। माला में उसके सारे मनोभाव पिरोए होते हैं। जब कोई बड़ा माला पहिनाए तो उसका आशीर्वाद होता है। जब कोई छोटा माला पहिनाए तो उसकी शुभकामना होती है। और, जब कोई समव्यस्क गले में माला डालता है तो वह गले लगा लेने के तुल्य होता है। इसलिए जब कोई माला पहिनाए तो उसे अत्यन्त स्नेह और आदर के साथ मैं स्वीकार करने लगा हूं।

आज के आयोजन में बड़ा उत्साह है। जैसा स्नेह आपने मालाएं पहिनाकर दर्शाया है वैसा ही स्नेह आज की लोग अदालत में भी दर्शाइए। जितनी मालाएं पहिनाई गई हैं उन मालाओं में जितने फूल हैं कम से कम उतने मामले आज सुलह से निबटें। जितनी मालाएं

* राघोगढ़, जिला गुना में आयोजित वृहद् लोक-अदालत के उद्घाटन के अवसर मुख्य अतिथि न्यायाधिपति श्री आर. सी. लाहोटी, उच्च न्यायालय मध्यप्रदेश, (ग्वालियर पीठ) द्वारा दिया गया वक्तव्य।

आपने पहिनाई हैं उतनी लोक अदालतें राघोगढ़ में लगे। तब मैं मानूंगा कि आपका मालाएं पहिनाना सार्थक हुआ है।

हमारे देश में न्यायदान की परम्परा और इतिहास बहुत पुराना है। नीतिशास्त्रों और धर्मग्रन्थों में न्याय को धर्म के पर्याय के रूप में प्रयोग किया गया है। अदालत या न्यायालय को 'धर्माधिकरण' कहा जाता था। हमारे धर्मशास्त्रों में उल्लेख मिलता है कि पांच प्रकार की अदालतें हुआ करती थीं — कुल, श्रेणी, गण, अधिकृत, नृप। कुल अर्थात् परिवार का न्यायालय। परिवार के लोग अपने विवादों को अपने ही परिवार में बैठ कर अपने बुजुर्गों की सलाह से निबटा लेते थे। श्रेणी — यानि जाति या समाज की अदालत। घर का विवाद घर में न सुलझे तो उस जाति या समाज के लोग मिलकर निबटाते थे। गण— याने नगर की अदालत। उस बस्ती या शहर के बुजुर्ग और प्रभावशाली व्यक्ति मिलकर अपनी बुद्धि और प्रभाव का उपयोग विवाद के समाधान के लिए किया करते थे। अधिकृत — राजा द्वारा नियुक्त न्यायाधिकारी होता था। और इन सबसे विवाद का निराकरण न हो पाए तो राजा के पास पहुंचता था।

यह न्याय की व्यवस्था बिना खर्च के, बिना किसी पेचीदगी के और सहज सुलभ होती थी। राम—राज्य तो आप सब जानते ही हैं कि वैसे न्याय होता था। जहांगीर के न्याय की चर्चा हम इतिहास में पढ़ते हैं। कोई भी व्यक्ति जिसके साथ जुल्म या बेइंसाफी हुई है वह एक जंजीर खींचता था जिसके दूसरे छोर पर एक घन्टा लगा होता था जो जहांगीर के महल में बजता था और जहांगीर खुद आकर सुनवाई करता था, इंसाफ देता था। यह था सस्ता, सुलभ त्वरित न्याय!

न्यायदान के केवल दो पक्ष हुआ करते थे — एक वे जिनमें विवाद है और दूसरा निराकरण करने वाला यानि कि पक्षकार और अदालत। कालान्तर में इसमें तीसरा पक्ष और जुड़ा — वकील। वकील का जन्म कैसे हुआ और वकील काला कोट क्यों पहिनते हैं इसकी कहानी बड़ी

रोचक है। मैंने पढ़ी है या सुनी है। कहानी की सत्य घटना माने जाने की साक्ष्य तो नहीं हैं पर मेरा हृदय इसे सत्य मानता है और इससे प्रेरणा की ऊर्जा गृहण करता है, एक अधिवक्ता को उसके कर्तव्य का बोध कराता है। वह क्यों वकील है, विकालत का उद्देश्य क्या है, इसे यह कहानी उजागर करती है।

एक समय एक बादशाह को यह गलतफहमी या भ्रम हो गया कि वह खुदा है। राजा ने कहा कि मैं भगवान हूँ। उसने अहकाम जारी किए कि आयन्दा उसे भगवान कहा जाए। राज्याज्ञा। उस जमाने में राजा के आदेश का उल्लंघन करने की सजा एक ही हुआ करती थी — सजा—ए—मौत। मृत्यु — दण्ड । लिहाजा सभी राजा को भगवान कहने लगे। परन्तु एक व्यक्ति ऐसा था जिसने ऐसा करने से इंकार कर दिया। उसने कहा भगवान राजा से ऊपर है, अतः राजा भगवान नहीं हो सकता। उसे प्राण—दण्ड दिया गया। जिस दिन उसे सजा दी जाना थी उसके एक मित्र ने संकल्प लिया कि वह उसे बचाएगा। वह जानता था कि राजा के आदेश के खिलाफ आवाज उठाने पर उसे भी मौत की सजा दी जाएगी। उन दिनों जिसे फांसी दी जाना होती थी उसे काले वस्त्र पहिना दिए जाते थे। मौत की सजा पाने के लिए यह आदमी घर से ही तैयार होकर गया। उसने काले वस्त्र पहिने। राजा के दरबार में उपस्थित हुआ। अनेक धर्मग्रन्थों और दर्शनशास्त्र से आधार लेकर उसने राजा के समक्ष प्रबल और अकाट्य तर्क प्रस्तुत किए। राजा को मानना पड़ा कि वह सिर्फ राजा है, भगवान नहीं। उसने अपना दिया हुआ मृत्यु—दण्ड वापस ले लिया। इस प्रकार वकील का जन्म हुआ और उस पहिले वकील द्वारा पहिने गये काले वस्त्र के स्थान पर प्रतीक रूप में, काला कोट वकील पहिनते हैं। यह काला कोट इस संकल्प का प्रतीक है कि चाहे हमारे प्राण चले जाएं, परवाह नहीं किंतु असत्य और अन्याय के विरोध में हमारी आवाज उठेगी।

किंतु सारे संसार के नैतिक मूल्यों में गिरावट आई है। हर क्षेत्र में आई है। न्यायदान इससे अछूता नहीं रहा। इसका कारण है।

महाभारत का एक प्रसंग है। अर्जुन के मुकाबले में द्रोणाचार्य, कौरवों का समर्थन करते हुए हारते चले गए। द्रोणाचार्य गुरु थे। अर्जुन शिष्य। किसी ने द्रोणाचार्य से कारण जानना चाहा। पूछा — आप गुरु हैं, आप ही ने अर्जुन को शास्त्र विद्या सिखाई है, फिर भी आप अपने ही शिष्य के मुकाबले में कमजोर क्यों पड़ रहे हैं? उनने कहा, — मैं राज्याश्रय पर आश्रित हूं। अर्जुन निरन्तर विपत्तियों से संघर्ष करता रहता है। संघर्ष के कारण उसकी क्षमता बढ़ती जाती है। आश्रित होने के कारण मेरी घटती जाती है। सारांश यह है कि जो व्यवस्था पूरी तरह राज्याश्रय पर आश्रित हो जाए, जनता की भागीदारी हट जाए तो व्यवस्था कमजोर हो जाती है। न्याय व्यवस्था के साथ यही हुआ है।

आज स्थिति यह है कि मुकदमेबाजी खर्चीली है, उसमें जटिलता है, विलम्ब होता है। खर्च, देरी और परेशानी से भी शायद एक बार शिकायत न हो यदि इन्साफ हो जाए। मुकदमा लड़ने के बाद जो फैसला होता है, क्या वह सही ही होता है? जरूरी नहीं। जज मुकदमा निबटाता है, अपनी बुद्धि विवेक से सही निबटाने की कोशिश करता है परन्तु फैसला सही ही हुआ है, शायद वह भी नहीं जानता। हर मुकदमे में सच बात क्या है, यह केवल दो लोग ही जानते हैं, या तो भगवान या उस मामले के पक्षकार। अदालत का फैसला तो सही तभी हो सकता है जब चार ईमानदार एक साथ मिलें। ईमानदार पक्षकार, ईमानदार गवाह, ईमानदार वकील और ईमानदार जज। इन चार धड़ों में से किसी एक के ईमान में मिलावट हो जाना मुश्किल नहीं है। इसलिए सस्ते, सुगम और शीघ्र न्याय के लिए चाहिए जनता के द्वारा, जनता के लिए, जनता की अदालत। लोक अदालत इसी क्रान्तिकारी विचार का एक रूप है।

हमारे यहां यह प्रयोग न्याय पंचायतों की व्यवस्था के द्वारा करने का प्रयास किया गया था। दुर्भाग्यवश वह प्रयोग सफल नहीं हुआ। मोटे तौर पर कारण यह बना कि न्याय पंचायतों के पंचों को न्याय-दर्शन के सिद्धान्तों का न तो ज्ञान था और न ही वैसा प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की गई थी। दूसरे, राजनैतिक जागरण की पहुंच अपनी विकृतियों के साथ न्याय पंचायतों में भी प्रवेश कर गई। उनके फैसले निष्पक्ष नहीं होते थे। उम्मीद है कि लोक अदालतों में ये विकृतियां नहीं आएंगीं। अब तक लोक अदालतों के प्रति सभी वर्गों में बहुत उत्साह है। परिणाम भी अच्छे आ रहे हैं। जब तक जनता की भगीदारी रहेगी, लोक अदालतों का आन्दोलन आगे बढ़ता रहेगा। इसलिए जनता को चाहिए कि इसे उत्साह से अपनाए।

लोक अदालत का उद्देश्य मुकदमें निबटाना ही नहीं है। यह तो उसका अन्तिम उद्देश्य है। उसका सबसे पहिला उद्देश्य शैक्षणिक है। एक ऐसा वातावरण तैयार करना कि लोगों के मध्य विवाद हो ही नहीं। यदि विवाद हों तो अदालत में जाने के पहिले ही वे आपसी सद्भाव से सुलझ जाएं — यह दूसरा उद्देश्य है। यदि दैवयोग से, विवाद हो, सुलझ न पाए, अदालत तक पहुंच ही जाए तो भी निराश न हो, आशा न छोड़ें और लोक अदालत के जरिए उसे निबटाने की कोशिश करें, यह तीसरा उद्देश्य है।

तो आइए, हम सब उसी भगवती सरस्वती, जिसके चित्र के समक्ष हमने दीपक प्रज्ज्वलित किया है, उसी से प्रार्थना करें कि वह हमारी बुद्धि को निर्मल करें, हमारे नेत्रों को शक्ति दे कि बैरभाव भूलकर हम देख सकें कि हमारा भला किस बात में है। थोड़ा नुकसान उठाकर भी सबका लाभ किसमें हैं। हमारे कानों को शक्ति दे कि बुजुर्गों और सलाहकारों की नेक सलाह हम सुनें। जिह्वा को शक्ति दे कि वह मीठी और विनम्र वाणी बोले। हमारे पैरों को शक्ति दे कि वे एक दूसरे की ओर बढ़ें, हम परस्पर निकट आएँ। हाथों को शक्ति दे कि वे न केवल एक दूसरे से मिलें बल्कि एक दूसरे को गले से लगा लें।

आज की लोक अदालत के आयोजकों और सहयोगियों को इस श्रेष्ठ आयोजन के लिए बधाई। सभी को सफलता के लिए शुभ-कामनाएं।

धन्यवाद।